इकाई 18 संसाधनों का उपयोग, संयोजन तथा प्रबंध

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
18.2 प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग
18.3 प्रयुक्त संसाधनों और अपशिष्टों का पुनः चक्रण
18.4 संसाधनों का संयोजन और प्रबंध
भूमि उपयोग, संयोजन और प्रबंध
मृदा प्रबंध
वन संसाधनों का प्रबंध
जल संसाधनों का प्रबंध
18.5 खनिज संसाधनों का संरक्षण
18.6 सारांश
18.7 अंत में कुछ प्रश्न
18.8 उत्तर

18.1 प्रस्तावना

इकाई 17 में आपने प्राकृतिक संसाधनों की विभिन्न किस्मों और उनके खोजने के तरीकों के बारे में पढ़ा। इस इकाई में आप पढ़ेंगे कि जल, मृदा, वन और खनिज आदि जैसे सीमित और ग़ैर-नवीकरणीय संसाधनों का किस प्रकार अच्छी तरह से उपयोग किया जा सकता है।

आप संसाधन उपयोग के संयोजन और प्रबंध के बारे में भी संक्षेप में पढ़ेंगे। सीमित संसाधनों को लम्बे समय तक चलाने के लिए संसाधन आयोजन आवश्यक है और जो भी कुछ उपलब्ध है उसका संरक्षण करने तथा राष्ट्रीय विकास के लिए इन संसाधनों का सबसे प्रभावी उपयोग करने के लिए प्रबंध आवश्यक है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- बता पाएंगे कि किस प्रकार विवेकपूर्ण और सावधानीपूर्वक बनाई गई योजनाओं से मनुष्य की भलाई के लिए विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग किया जा सकता है और किस प्रकार अपने सीमित संसाधनों का अधिकतम इस्तेमाल किया जा सकता है।
- जल और खनिज संसाधनों के संरक्षण के विभिन्न पहलुओं का वर्णन कर सकेंगे।
- बता सकेंगे कि किस प्रकार अपनी वन संपदा को समाप्त किए बिना वन संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है
- शहरी अपशिष्ट, धातुमल, फ्लाई ऐश इत्यादि जैसे अपशिष्टों के बेहतर उपभोग के तरीकों के बारे में बता सकेंगे।

18.2 प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग

इकाई 17 में आपने भूमि, जल, मृदा और खनिज आदि जैसे विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के बारे में पढ़ा। आप जानते हैं कि ये प्राकृतिक संसाधन सीमित और बहुमूल्य होते हैं। इसलिए इनका उपयोग कुशलतापूर्वक करना चाहिए। अब हम यह बताएँगे कि किस प्रकार हमारे देश में विभिन्न संसाधनों का उपयोग हो रहा है।

भूमि

भूमि सबसे बहुमूल्य संसाधन है क्योंकि इसके उत्पादन पर ही मानव एवं अन्य जीव-जन्तु निर्भर हैं। भारत में भूमि का लगभग 44 प्रतिशत हिस्सा कृषि कार्यों के लिए उपयोग किया जाता है। इसका 11-14 प्रतिशत भाग वनों से घिरा हुआ है, जिसमें अच्छे व निम्न कोटि दोनों ही प्रकार के

वन सम्मिलित हैं, और 4 प्रतिशत भूमि चरागाह और चारे के खेतों के रूप में उपयोग होती है। भूमि का शेष 8 प्रतिशत भाग आवास, कृषि संबंधी वनों, उद्योगों की स्थापना, सड़कों और जलाशयों के विकास जैसे विभिन्न प्रयोजनों के लिए उपयोग किया जाता है।

हमारी भूमि का लगभग 14 प्रतिशत भाग बंजर है, जिसका अर्थ है कि फसल उगाने के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। मृदा की क्षारता या लवणता, और जलांक्रांति (water logging) आदि के कारण बंजर भूमि के लगभग एक तिहाई भाग की उत्पादकता नष्ट हो गई है। मृदा अपरदन (soil erosion) से हमारी भूमि की उत्पादकता को बहुत क्षति पहुंचती है क्योंकि इस प्रक्रिया में मृदा विखंडित हो जाती है और जल के साथ बह जाती है या हवा के साथ उड़ जाती है। यह तथ्य भूमि के बिना सोचे समझे उपयोग किए जाने की ओर ध्यान दिलाते हैं और हमारे भूमि संसाधनों की अव्यवस्थता को प्रदर्शित करते हैं।

आज हमारी जनसंख्या का लगभग 24 प्रतिशत भाग नगरीय क्षेत्रों या शहरों में रहता है। नगरीकरण में तेज़ी से वृद्धि और गाँवों से नगरीय क्षेत्रों की ओर लोगों के प्रवास (migration) से दो गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। शहरों की ओर लोगों के प्रवास से शहरों में जनसंख्या बढ़ने लगती है और शहरों का विस्तार होने लगता है, जिसके कारण कृषि-भूमि का इस्तेमाल आवास, कार्यालयों, फैक्टरी भवनों, सड़कों और पुलों आदि के लिए होने लगता है। दूसरी ओर ग्रामीण भूमि का उपयोग जितना होना चाहिए उतना नहीं हो पाता। शहरों में जनसंख्या इतनी बढ़ जाती है कि वहां रहन-सहन की स्थिति खराब हो जाती है। मल-जल व्यवस्था खराब हो जाती है और पेय जल की कमी पड़ जाती है। अधिक वहनों के कारण प्रदूषण बढ़ जाता है। गंदी बस्तियों में ग़रीब लोग बडी संख्या में इकट्ठे होने लगते हैं। प्रवास केवल तब ही रोका जा सकता है जब गाँवों की जीवन स्थिति में सुधार हो, और जब यातायात और संचार, स्वास्थ्य की देखभाल, शिक्षा और मल-जल निपटान की अच्छी व्यवस्था तथा स्वच्छ पेय जल जैसी अन्य मौलिक सुविधाएँ गाँवों में दी जाएँ। ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग स्थापित करने से स्थानीय लोगों को अधिकाधिक संख्या में रोज़गार मिल सकेगा, जिससे गाँव छोड़ कर जाने वाले लोगों की संख्या कम हो जाएगी।

जल

खेतों की सिंचाई के लिए या पीने के लिए पानी, नदियाँ, झरनों और कुंओं से प्राप्त होता है। कुंओं से भूमिगत जल प्राप्त होता है। नदियों में प्रवाहित या संग्रहीत भूमिगत जल की अधिकता के बावजूद आज भी अधिकांश गांवों में पेय जल की कमी है। ग्रामीण क्षेत्रों में पेय जल अक्सर कुछ किलोमीटर की दूरी से लाना पड़ता है। यहां तक कि कुछ शहरों में भी नगर पालिका द्वारा जल आपूर्ति की व्यवस्था (Water Municipal Supply System) नहीं है। दूसरी ओर बहुत से पानी का दुरुपयोग होता है या उसे बेकार में ही बहा दिया जाता है। सिंचाई के लिए लगभग 48 प्रतिशत भूमिगत जल का उपयोग किया जाता है। प्रायः भूमिगत जल का उपयोग पूरी तरह नहीं हो पाता है। यदि इसे पंप करने के लिए आवश्यक उपकरण और उर्जा उपलब्ध हो तो भूमि के बड़े भाग की सिंचाई के लिए इस जल का इस्तेमाल किया जा सकता है और सिंचाई के लिए एक विश्वसनीय व सुनिश्चित स्रोत प्राप्त हो सकता है।

वन आवरण

उपग्रह से प्राप्त चित्र और वायुयान द्वारा लिए गए चित्रों के विश्लेषण से पता चलता है कि 1982 में भारत के भू-क्षेत्र का लगभग 14 प्रतिशत भाग घने वनों से घिरा हुआ था और शेष 3 प्रतिशत भाग में निम्नकोटि के या छितरे वन थे (चित्र 17.2)। विश्व के आँकड़ों से पता चलता है कि अन्य जगहों में इससे अधिक वन हैं। अपने पर्यावरण को बेहतर बनाए रखने के लिए और जिस हवा में हम सांस लेते हैं उसकी शुद्धता बनाए रखने के लिए हमें अधिक वनों की आवश्यकता है।

भारत में वन संसाधनों का इन वनों के आस-पास रहने वाले निर्धन लोगों द्वारा ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इमारती लकड़ी और फलों की पेटियाँ बनाने के लिए तथा कागज़ के निर्माण के लिए लकड़ी के बढ़ते हुए उपयोग के कारण बड़ी संख्या में वृक्षों को काट दिया जाता है। पशुओं की बढ़ती हुई संख्या के कारण भी वनों की चराई अधिक होती है। पिछले 30 वर्षों में वनों का लगभग 43 लाख हेक्टेयर क्षेत्र या तो कृषि-क्षेत्रों में बदल दिया गया या बांध व सड़कें बनाने में उपयोग किया गया है। कुल वन क्षेत्र जो 750 लाख हेक्टेयर है, का यह काफी बड़ा भाग है। नवीनतम सूचनाओं के अनुसार हमारे देश का वन क्षेत्र 1.6 लाख हेक्टेयर प्रतिवर्ष की दर से कम होता जा रहा है। यदि वन क्षेत्र इसी दर से घटता रहा तो सौ वर्षों के भीतर ही देश का बड़ा भाग केवल घास का मैदान बन कर रह जाएगा, जिसके कारण भारत में हमेशा के लिए सूखे एवं बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी।

खनिज

कोयला, लोहा, तांबा, इस्पात आदि जैसे खनिजों का सभी किस्म के उद्योगों और दैनिक जीवन में इस्तेमाल किया जाता है। खनिजों के खपत की दर प्रति वर्ष बढ़ती ही जा रही है। यद्यपि बॉक्साइट, क्ले, ज़िप्सम, सिलिका, सल्फ़र, कोयला आदि जैसे खनिजों की तुलना में चूना, पत्थर और लौह अयस्क जैसे कुछ खनिजों की प्रति व्यक्ति खपत अधिक है, फिर भी यदि हम संयुक्त राज्य अमरीका या जापान जैसे विकसित राष्ट्रों से तुलना करें तो हम पाएंगे कि हमारी प्रति व्यक्ति खनिज खपत बहुत ही कम है। हमारे देश में उत्पादित खनिजों का बड़ा भाग कच्ची सामग्री के रूप में विदेशी मुद्रा कमाने के लिए अन्य देशों को निर्यात कर दिया जाता है। फिर भी यूरेनियम, हीरे, कुछ किस्म के इस्पात, तांबे, अलौह मिश्र धातु और कच्चे तेल (crude oil) इत्यादि का किसी न किसी रूप में आयात किया जाता है।

संसाधनों के उपयोग में एक महत्त्वपूर्ण समस्या है कि अपशिष्टों या व्यर्थ पदार्थों का निपटान किस प्रकार किया जाए ताकि इन अपशिष्टों का संसाधनों के रूप में उपयोग किया जा सके। अब हम अपशिष्ट पदार्थों के पुनःचक्रण पर विचार करेंगे। लेकिन इससे पहले निम्नलिखित बोध प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास कीजिए।

बोध प्रश्न 1

विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के उपयोगों के बारे में नीचे कुछ विवरण दिये गये हैं। कॉलम "ख" में दिये विवरण को कॉलम "क" में दिए संसाधन में मिलाइये।

क		ख
भूमि	i)	विश्व के आँकड़ों से पता चलता है कि अन्य जगहों में इससे अधिक वन है। अपने पर्यावरण को बेहतर बनाए रखने के लिए और जिस हवा में हम सांस लेते हैं उसकी शुद्धता बनाए रखने के लिए हमें अधिक वनों की आवश्यकता है।
जल	ii)	हमारे देश के उत्पादन का बड़ा भाग कच्ची सामग्री के रूप में विदेशी मुद्रा कमाने के लिए अन्य देशों को निर्यात कर दिया जाता है।
वन आवरण	iii)	यदि इसे बाहर निकालने के लिए आवश्यक उपकरण और ऊर्जा उपलब्ध हो तो हमारे भू-क्षेत्र के एक बड़े भाग की सिंचाई के लिए सुनिश्चित स्रोत प्राप्त हो सकता है।
खनिज	iv)	शहरों में जीवन की दशा जनसंख्या में वृद्धि के साथ गिरती जाती है। मल-जल व्यवस्था और जल आपूर्ति व्यवस्था बिगड़ जाती है और अधिक वाहनों से अधिक प्रदूषण होता है।

18.3 प्रयुक्त संसाधनों और अपशिष्टों का पुनःचक्रण

कुछ पदार्थ एक बार इस्तेमाल किए जाने के पश्चात् बेकार नहीं होते, इनको एकत्रित कर पुनः इस्तेमाल किया जा सकता है। संसाधनों के अपशिष्टों को फिर से उपयोग करने योग्य बनाने की प्रक्रिया को पुनःचक्रण कहते हैं।

खुरचन और प्रयुक्त धातुएं

कारखानों और फैक्टरियों में धातुओं की खुरचन बड़ी मात्रा में उत्पन्न होती है। पुराने और उपयोग न किए जा सकने वाले वाहनों, मशीनों, वायुयानों, जलयानों और इमारतों आदि की पुरानी प्रयुक्त धातुओं को लाभप्रद प्रयोजनों के लिए फिर से पिघलाकर पुनःचक्रण किया जाता है। उदाहरण के लिए, पुराने इस्तेमाल किए हुए ऐलुमिनियम के बर्तनों को फिर से पिघलाकर नए बर्तनों के आकार में ढाला जा सकता है। तांबा, जस्ता, सीसा, प्लेटिनम आदि जैसी अपर्याप्त धातुओं की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए उपयुक्त सामग्री का पुनःचक्रण किया जा सकता है।

अपशिष्ट जल

घरेलू और नगरीय अपशिष्ट जल में कार्बनिक पोषकों की मात्रा अधिक होती है। यदि इस तरह के जल को हानिकारक जीवाणुओं और विषाक्त तत्वों से मुक्त किया जा सके तो इसका उपयोग खेतों, उद्यानों और अन्य पेड़-पौधों की सिंचाई के लिए किया जा सकता है।

हानिकारक जीवाणुओं और विषाक्त तत्वों को दूर करने के लिए अपशिष्ट जल या मल-जल को एक टैंक या कुंड में कई दिनों तक संसाधित किया जाता है। ऐसा करने से भारी कण अपने आप नीचे बैठ जाते हैं, जबकि सूक्ष्म कणों को बैठाने के लिए इसमें फिटकरी और कास्टिक सोडा मिलाया जाता है। अब साफ पानी को रेत या मिट्टी के निस्यंदकों (filter) से गुज़ारा जाता है और अंत में इसमें से हवा प्रविष्ट कराई जाती है। इस उपचार से इसमें से केवल कार्बन डाइऑक्साइड और हाइड्रोजन सल्फाइड ही दूर नहीं होती, जो कि सामान्यतः अपशिष्ट जल में घुली हुई होती है, बल्कि निस्यंदित जल में ऑक्सीजन भी मिल जाती है। इससे जल का काफी हद तक शुद्धीकरण हो जाता है। क्लोरीन की उपयुक्त मात्रा से जल के उपचार की प्रक्रिया को क्लोरीनीकरण कहा जाता है। क्लोरीनीकरण से सभी हानिकारक जीवाणु मर जाते हैं और इस जल का फिर से उपयोग किया जा सकता है।

शैवाल या जल हायासिंथ जैसे पौधे जो नदियों, झीलों आदि पर तैरते रहते हैं, की वृद्धि दो तरह से लाभदायक सिद्ध होती है। ये फ़ास्फ़ेट और नाइट्रेट जैसे प्रदूषकों, जो इन पौधों के लिए पोषक तत्व का कार्य करते हैं, से जल की सफाई करते हैं। इन पौधों का बायोगैस बनाने के लिए भी उपयोग किया जा सकता है, जिसके बारे में आप इकाई 17 में पहले ही पढ़ चुके हैं।

ठोस अपशिष्ट

कुछ मामलों में ठोस अपशिष्ट भी संसाधन के रूप में इस्तेमाल हो सकते हैं। जापान में योकोहामा की एक फैक्टरी इसका एक अच्छा उदाहरण है, जिसमें रद्दी पेपर को टॉयलट पेपर में बदला जाता है। हमारे देश में, पटना शहर की मुख्य सड़कें बायोगैस द्वारा प्रकाशमान की जाती हैं। यह बायोगैस वहां के निवासियों के मल द्वारा बनाई जाती है। दिल्ली में, मल-जल उपचार संयंत्र से खाना पकानेवाली गैस (कुकिंग गैस) का उत्पादन किया जाता है। विभिन्न अपशिष्टों, जैसे जानवरों का गोबर, मानव मल-मूत्र, कूड़ाकचरा और शैवाल व जल हायासिंथ जैसे जलीय खरपतवारों के किण्वन से बायोगैस बनती है जिसका विभिन्न कार्यों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। किण्वन 28^0 से 40^0 सेन्टीग्रेड तापमान के बीच होता है और इसमें मुख्यतः मेथैन और कार्बन डाइऑक्साइड के साथ-साथ हाइड्रोजन सल्फाइड और नाइट्रोजन की भी थोड़ी मात्रा बनती है।

जब किसी धातु का उसके अयस्क से निष्कर्षण (Extraction) किया जाता है तो एक उप-उत्पाद (by-product) धातुमल बचता है, जिसको पाउडर के रूप में चूरा बनाकर सीमेंट में मिलाया जाता है और निर्माण कार्य में इस्तेमाल किया जाता है। फ्लाई ऐश भी एक अन्य पदार्थ है जिसका सीमेंटिग सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है।

किण्वन एक रासायनिक क्रिया है जिसके द्वारा कार्बनिक पदार्थों के जटिल यौगिकों का सरल यौगिकों में विखण्डन होता है।

उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि ठोस अपशिष्ट हमारे उद्योगों के लिए कच्चा माल देने के लिए, ऊर्जा उत्पादन के लिए और खाद के उत्पादन के लिए बहुत लाभप्रद ससाधन के रूप में काम आ सकते हैं। जो कुछ भी आपने सीखा है उसके परीक्षण के लिए निम्नलिखित बोध प्रश्न के उत्तर देने का प्रयास कीजिए।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित वाक्यों को पूरा कीजिए:

i) खुरचन और पुरानी प्रयुक्त धातुओं को फिर से गला कर और ..... के पश्चात् लाभप्रद कार्यों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

ii) क्लोरीन की उपयुक्त मात्रा के द्वारा जल-उपचार से जल में विद्यमान हानिकारक ..... मर जाते हैं।

iii) घरेलू और शहरी अपशिष्ट जल का ..... के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

iv) ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा संसाधनों के अपशिष्टों को पुनः उपयोग करने योग्य बनाया जाता है, ... कहलाती है।

v) फ्लाई ऐश का इस्तेमाल ..... के रूप में किया जाता है।

vi) ठोस अपशिष्ट हमारे उद्योगों के लिए ..... के रूप में लाभप्रद संसाधन हैं।

18.4 संसाधनों का संयोजन और प्रबंध

आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि हमारे संसाधन सीमित हैं और यदि इनका उचित ढंग से उपयोग न किया गया तो वे जल्दी ही समाप्त हो जाएंगे। इसलिए हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि किस प्रकार विवेकपूर्ण एवं सोच समझ कर बनाई गई योजनाओं से हमें अपने सीमित संसाधनों का उपयोग करना चाहिए।

18.4.1 भूमि उपयोग, संयोजन और प्रबंध

लोग अपने चारों ओर भूमि ही भूमि देखते हैं और यह समझते हैं कि यह प्रचुरता में उपलब्ध है। वे इस बात की परवाह नहीं करते कि इसका उपयोग किस प्रकार से किया जा रहा है,जब तक कि यह उनकी स्वयं की संपत्ति न हो। जनता और सरकारी संस्थाओं के इस ओर ध्यान न दिए जाने के कारण मृदा संसाधनों का व्यापक अपरदन, मृदा शिथिलन (soil sickness) और कई अन्य नुकसान हो रहे हैं। भूमि एक नष्ट होने वाला संसाधन है जो जलवायु में परिवर्तनों और वर्षा, धूप, वनस्पति, अपरदन, भू-स्खलन जैसी प्राकृतिक प्रक्रियाओं के प्रति बहुत ही संवेदनशील है।

भूमि का उपयोग, इसकी उपयुक्तता और सामर्थ्य के अनुसार किया जाना चाहिए। जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं भूमि की उपयुक्तता और सामर्थ्य का निर्धारण इसकी भार वाहन की क्षमता और उर्वरकता के रूप में किया जाता है।

बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य सामग्री की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधिक भूमि में खेती करनी होगी, और क्योंकि भूमि सीमित है इसलिए उपजाऊ भूमि का सड़कों और भवनों के निर्माण जैसे ग़ैर-कृषि कार्यों के लिए कम से कम प्रयोग करना चाहिए। उद्योगों के विकास, बाँधों और जलाशयों आदि के लिए स्थान का चुनाव करते समय अत्यंत सावधानी बरतनी चाहिए, ताकि उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों के पर्यावरण और सामाजिक-आर्थिक स्थिति में कोई नुकसानदेय बदलाव न आए। नगरीय केंद्रों के विकास के लिए स्थान का निर्धारण करते समय आवास, जल आपूर्ति व्यवस्था, अपशिष्ट और कूड़े-कचरे के निपटान आदि आवश्यकताओं का ध्यान रखना चाहिए।

जहाँ तक संभव हो पर्वतीय क्षेत्रों में गहरे वन होने आवश्यक हैं क्योंकि वन ईंधन, चारे और इमारती लकड़ी के लिए संसाधन का कार्य करते हैं, और जन्तु पालन के लिए स्थान प्रदान करते हैं (चित्र 18.1)। इसके अतिरिक्त, वन भूमिगत जल बढ़ाने में सहायक होते हैं क्योंकि वे पृथ्वी की सतह पर जल के स्वतंत्र प्रवाह में बाधा उत्पन्न करते हैं, जिससे ज़मीन में जल का अवशोषण बढ़ जाता है। इस प्रक्रिया में मृदा अपरदन कम हो जाता है और साथ ही बाढ़ आने की संभावना भी कम हो जाती है। वनों से पारिस्थितिक तंत्र में, अर्थात् जंतुओं, पौधों, वायु और जल आदि के बीच संतुलन बनाए रखने में सहायता मिलती है।

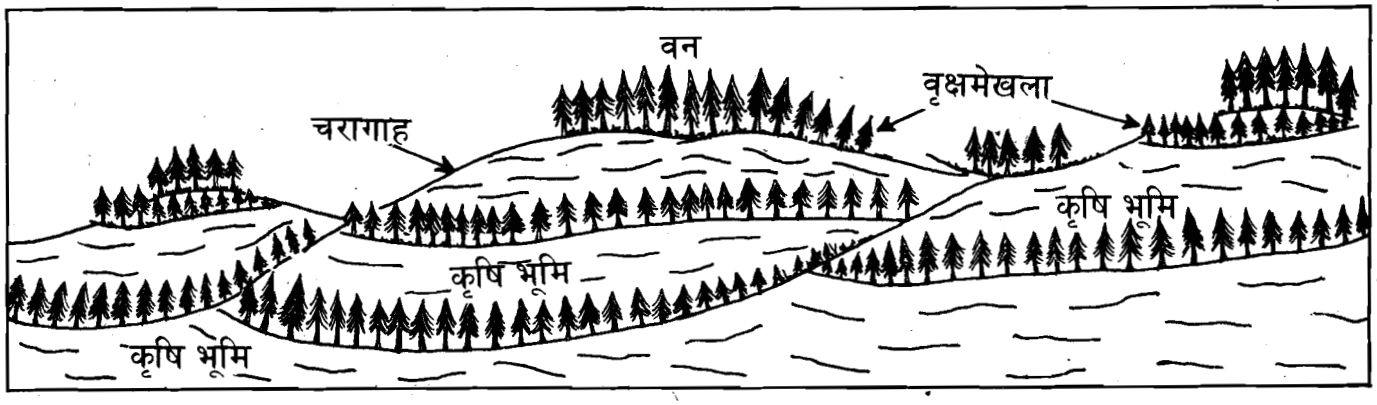

चित्र 18.1 : पहाड़ी क्षेत्रों में भूमि का आदर्श उपयोग।

अब हम यह पढ़ेंगे कि भूमि प्रबंध के आवश्यक घटक क्या हैं।

भूमि प्रबंध के आवश्यक घटक

भूमि प्रबंध के पांच आवश्यक घटक हैं:

i) मृदा उत्पादकता और ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में मानव के विभिन्न कार्यकलापों की वहन योग्यता प्रदर्शित करने वाले भूमि क्षमता का मानचित्र बनाना। इस प्रकार के मानचित्र वायुयानों से प्राप्त फोटो और उपग्रह प्रतिबिम्बों की सहायता से तैयार किये जाते हैं। इन

मानचित्रों से हमें चट्टानों और मृदा के गुणों और भूमिगत जलाशयों की सामर्थ्य के बारे में भी पता चलता है।

ii) मृदा की किस्म, भूपटल के भौतिक लक्षणों, जल संसाधनों के निवेश (input), वितरण, और उपयोग, पृथ्वी की सतह पर प्रवाह एवं भंडारण, उदाहरण के लिए कुंडों और भूमिगत जल जैसे भूमि के विभिन्न पहलुओं का विस्तृत अध्ययन करना। ऐसी सूचनाओं के आधार पर भूमि उपयोग के लिए एक कार्यक्रम बनाया जा सकता है।

iii) भूमि उपयोग से होने वाले परिवर्तनों को मॉनीटर करना। यह सुदूर संवेदन द्वारा किया जाता है।

iv) किसी क्षेत्र विशेष में आने वाले संकट की तीव्रता की जाँच करना एवं अनुमान लगाना।

v) अपरदन अथवा मृदा शिथिलता की तीव्रता की रोक-थाम करके भूमि के संरक्षण के लिये भूमि प्रबंध के कार्यक्रम और योजनाओं का व्यापक अध्ययन करना।

18.4.2 मृदा प्रबंध

जैसा हमने पहले कहा कि मृदा एक बहुमूल्य संसाधन है जिसके बनने में करोड़ों वर्ष लगते हैं, इसलिए मृदा के उचित प्रबंध की बहुत आवश्यकता है मृदा के प्रबंध में दो मुख्य बातें हैं :

क) मृदा अपरदन को कम करना या उसे रोकना, और

ख) मृदा की उत्पादकता वापस लाना।

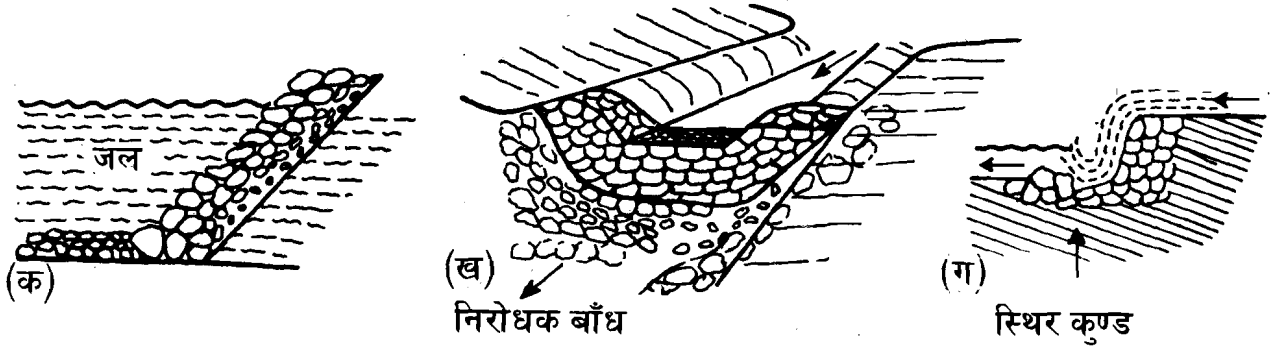

चित्र 18.2 : क; जल के अनियंत्रित प्रवाह को रोकने के लिए जल निकास व्यवस्था। ख, ग; जल के प्रवाह को रोकने के लिए निरोधक बाँध।

मृदा अपरदन का नियंत्रण

मृदा अपरदन के नियंत्रण के लिए सबसे महत्वपूर्ण उपाय है (i) घास, झाड़ियाँ एवं वृक्ष उगाना और (ii) जल के स्वतंत्र व अनियंत्रित प्रवाह को रोकने के लिए जल निकास प्रणाली का निर्माण करना (चित्र 18.2 क)। जल प्रवाह के कारण पहले तंग नालियाँ बनती हैं जो धीरे-धीरे गहरी तंग घाटियाँ बन जाती हैं और बाद में खड्ड भूमि (ravine land) का रूप धारण कर लेती हैं। प्रसिद्ध चंबल खड्ड भूमि गंभीर मृदा अपरदन के कारण ही बनी है और यह प्रक्रिया अभी तक चल रही है। बहुत से निरोधक बांध बना कर इस पर नियंत्रण किया जा सकता है। ये बांध जल के प्रवाह और तंग घाटियों को चौड़ा होने से रोकते हैं (चित्र 18.2 ख, ग)। महाराष्ट्र, केरल, आंध्र प्रदेश और उड़ीसा के तटों पर पत्थर की चौड़ी दीवार का निर्माण, समुद्री तरंगों और धाराओं द्वारा अपरदन पर नियंत्रण रखने में बहुत प्रभावी सिद्ध हुआ है। रेगिस्तानों और रेतीले तटों में वायु के तेज़ झोंकों से रेत का उड़ना, वायु के मार्ग में वृक्षों और झाड़ियों को उगा कर रोका जा सकता है (चित्र 18.3)। पहाड़ों और पर्वतीय क्षेत्रों में स्वप्रजननी (self-propagating) वृक्षों और झाड़ियों के तने और शाखाएं लगाने से न केवल ढलान ही सुदृढ़ बनती है, बल्कि इससे कृषकों को ईंधन की लकड़ी और चारा भी मिलता है। फसलों की क्यारियों के साथ घास, झाड़ियों, वृक्षों, मक्का, ईख, कपास तम्बाकू आदि जैसे अपरदन प्रतिरोधी वनस्पतियों की एकांतर पट्टियों के लगाने से तथा पर्वतीय और पहाड़ी क्षेत्रों के ढलानों पर सीढ़ीदार खेत बनाने से खेतों की मृदा स्थिर हो जाती है।

चित्र 18.3 : वृक्षों और झाड़ियों की बाड़ खड़ी करके रेत के झोंकों की रोकथाम

अपरदन और पहाड़ों पर भू-स्खलन जैसे वृहत संचलन (mass movement) पर नियंत्रण पाने के लिए जलनिकास खाइयाँ बनाई जाती हैं। इन खाइयों को ईंटों या पत्थरों के टुकडों से भर दिया जाता है ताकि जल उनसे होता हुआ निकल जाए। यह उपाय बहुत ही प्रभावशाली है। पहाड़ी ढालों पर दीवार बनाने से जल अपने साथ मिटटी लिए बिना प्रवाहित होता है और ढाल की मृदा स्थिर हो जाती है। महत्वपूर्ण ढालों पर वनस्पति आवरण (जैसा चित्र 18.4 में दिखाया गया है) उगाया जाता है और प्रारंभ में बीजों को नारियल के रेशों या झाड़-फूस से बनी चटाई से ढक दिया जाता है जो भूमि पर मज़बूती से गड़ी होती है। यह चटाई मृदा अपरदन को रोकती है, मृदा कणों

को बाँधे रखती है और मृदा में पोषक तत्वों की वृद्धि करती है। तेज़ी से घास की वृद्धि मृदा को स्थिर बनाती है।

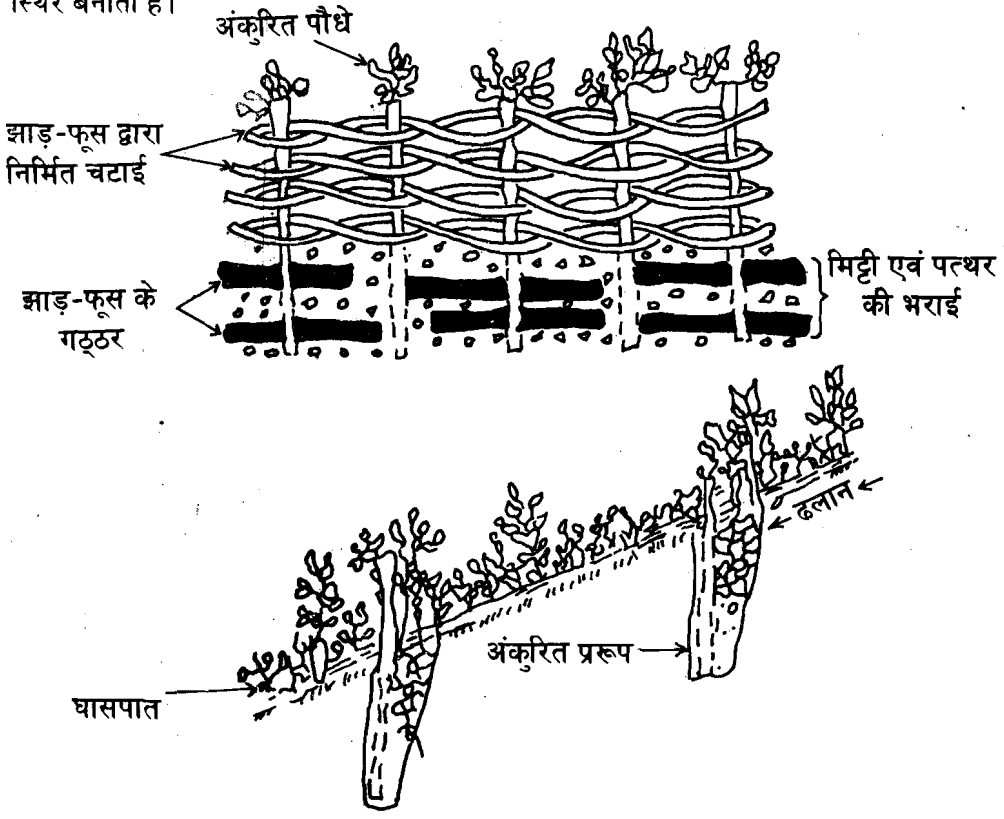

चित्र 18.4: पर्वतों के ढलानों पर वनस्पति आवरण का रोपण जिसमें झाड़-फूस से बनी चटाई का उपयोग किया गया है।

मृदा शिथिलता के उपचार

विश्राम के बिना, अत्यधिक इस्तेमाल के कारण मृदा में आवश्यक पोषक तत्त्वों की कमी हो जाती है और इसकी उर्वरकता समाप्त हो जाती है। मटर और फलियों जैसी फसलों के आवर्तन (rotation of crop) से पोषक तत्त्वों की कमी को पूरा करने में सहायता मिलती है। मटर जैसे पौधों से मृदा में नाइट्रोजन की वृद्धि होती है और इस प्रकार मिट्टी के बद्धता गुण (binding property) और उसकी उत्पादकता में वृद्धि होती है। फसलों की जड़ें एवं शाखाओं और अवशेषों के कुछ समय तक खेतों में पड़े रहने से मृदा का अपरदन से बचाव होता है।

यह पाया गया है कि अत्यधिक सिंचाई के कारण मृदा जल से पूर्ण संतृप्त (saturation) या जलाक्रांत (water logging) हो जाती है, जिसके कारण यह अपनी उत्पादकता, पूर्णरूप से या आंशिक रूप से, खो बैठती है। कुछ क्षेत्रों में अति सिंचाई के कारण मृदा की लवणता या क्षारता में वृद्धि हो जाती है और वह "शिथिल" बन जाती है और इस प्रकार की मृदा शिथिलता पर नियंत्रण रखने के लिए सबसे पहले नहरों, जलाशयों, कुंडों और तालाबों से जलस्राव के सभी स्थानों को बंद करना होगा और जल की केवल आवश्यक मात्रा का ही उपयोग करना होगा। मृदा की लवणता और क्षारता, वानस्पतिक खादों और उर्वरकों के अतिरिक्त जिप्सम, (जिप्सम चॉक जैसा एक पदार्थ है जिससे प्लास्टर ऑफ पेरिस बनाया जाता है), फ़ास्फ़ोजिप्सम (फ़ास्फ़ेट सहित जिप्सम) और पायराइट (कॉपर, आयरन आदि के सल्फ़ाइड) जैसे कुछ रसायनों के उपयोग से कम की जा सकती है। जौ, बाजरा, सोया, कपास, पालक और खजूर के पेड़ जैसे लवण प्रतिरोधी पौधों के लगाने से भी मृदा की लवणता की समस्या को हल किया जा सकता है।

18.4.3 वन संसाधनों का प्रबंध

लकड़ी की सदैव बढ़ती हुई मांग को देखते हुए और हमारे वन संसाधनों के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि ईंधन के साथ-साथ कागज, खेल-कूद के सामान, पैकिंग केसेस, फर्नीचर और भवनों में प्रयुक्त धरनों (beams) आदि को बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में इसका विकल्प ढूंढा जाए। इस दिशा में अनुसंधान किये जा रहे हैं और कुछ मामलों में प्लास्टिक और मिश्रित सामग्री विकसित की गई है, यद्यपि इसका अभी तक व्यापक इस्तेमाल नहीं किया जा सका है। दूसरा तरीका यह है कि निम्न स्तर की या व्यर्थ भूमि के चुने गये कुछ हिस्सों में बड़ी संख्या में ऐसे वृक्ष और झाड़ियाँ लगाई जाएं जिनका विकास तेज़ी से होता है। इससे हमें चारा,

ईंधन की लकड़ी, इमारती लकड़ी, फल और बीज प्राप्त होंगे। यदि वन उन्मूलन को रोकना है, तो कुछ आवश्यक कदम उठाने होंगे। जैसे कि:

i) वन संपदा की कटाई की वैज्ञानिक विधि अपनाना,
ii) वन संवर्द्धन दर और वन की कटाई को मॉनिटर करने की क्रियाविधि का विकास करना,
iii) वनों में अग्नि शमन की प्रभावी पद्धति की स्थापना, और
iv) गैर-कानूनी ढंग से वृक्षों को काटने से संबंधित कानूनों का कड़ाई से पालन करना।

वृक्षारोपण

पाप्लर, कैजुराइना इत्यादि जैसे तेज़ी से बढ़ने वाले वृक्षों का बड़े पैमाने पर रोपण करना चाहिए। प्राकृतिक वनों की अपेक्षा रोपित वनों की उत्पादकता अधिक पाई गई है। अच्छी प्रकार से सींचे गए वृक्षों के फार्म की उत्पादकता 45 टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष तक बढ़ाई जा सकती है।

सामाजिक वानिकी

कृषक लकड़ी की अपनी मांग को आंशिक रूप से अपने गांव की सीमाओं के भीतर, फुटपाथों के किनारे, रेलपथों और सड़क मार्गों के किनारे, नहरों और, नदियों के दोनों ओर खेतों और रिक्त स्थानों की परिसीमाओं पर लगाए गए तेज़ी से बढ़ने वाले वृक्षों से पूरा कर सकते हैं। सामाजिक वानिकी का उद्देश्य ईंधन, चारे, फलों, इमारती लकड़ी और अन्य आवश्यकताओं को पूरा करना है।

18.4.4 जल संसाधनों का प्रबंध

जल संसाधनों के प्रबंध से तात्पर्य है कि ऐसा कार्यक्रम बनाना जिससे किसी जल स्रोत या जलाशय को क्षति पहुंचाए बिना विभिन्न उपयोगों के लिए अच्छे किस्म के जल की पर्याप्त पूर्ति हो सके। दूसरे शब्दों में, निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखने का प्रयास करना चाहिए : (i) सभी तरह के उपयोग के लिए सही किस्म का जल उपलब्ध हो, और (ii) इस बहुमूल्य संसाधन का दुरुपयोग या बर्बादी न हो।

जल प्रबंध के अंतर्गत भूमिगत जलाशयों का पुनर्भरण और आवश्यकता सें अधिक जल वाले क्षेत्रों से अभाव वाले क्षेत्रों की ओर जल की पूर्ति करना है।

भूमिगत जल का पुनर्भरण जल प्रबंध का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है। पर्वतों और पहाड़ों पर जल विभाजक (water sheds) वनस्पति से ढके होते हैं। जल विभाजक की घास-फूस से ढकी मृदा से वर्षा का जल अच्छी तरह से अन्दर प्रविष्ट हो जाता है, जहां से यह जलभर में पहुंच जाता है।

नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बरसाती पानी, इस्तेमाल किया हुआ पानी या घरेलू नालियों का पानी गड्ढों, खाइयों या किसी अन्य प्रकार के गड्ढे में पहुंच जाता है, जहां से यह छन कर भूमि के अन्दर चला जाता है। बाढ़ का पानी गहरे गड्ढों के माध्यम से जलभर में पहुंच जाता है या छोटे-छोटे गड्ढों से खेतों में फैल जाता है।

सामान्य प्रवाह से अधिक जल और बाढ़ का पानी उन क्षेत्रों की ओर ले जाया जा सकता है जहाँ इसका अभाव है। इससे न केवल बाढ़ द्वारा नुकसान होने की संभावना समाप्त हो जायेगी बल्कि अभावग्रस्त क्षेत्रों को भी लाभ पहुंचेगा।

घरेलू और नगरीय अपशिष्ट जल के उचित उपचार से बहुत से औद्योगिक और कृषि कार्यों के लिए उपयुक्त जल प्राप्त किया जा सकता है। जैसा कि आप पिछले भाग में पढ़ चुके हैं, अपशिष्ट जल के उपचार में प्रदूषकों, हानिकारक जीवाणुओं और विषाक्त तत्त्वों का हटाया जाना शामिल हैं।

समुद्री जल का विलवणीकरण

सौर ऊर्जा के इस्तेमाल से समुद्र के लवणीय जल का आसवन किया जा सकता है जिससे अच्छी किस्म का अलवणीय स्वच्छ जल प्राप्त हो सकता है। समुद्री जल के विलवणीकरण (desalination) की इस विधि, जिसमें पानी से लवण को दूर किया जाता है, का इस्तेमाल हमारे देश के कुछ स्थानों, जैसे गुजरात में भावनगर और राजस्थान में चुरु, में किया जा रहा है।

जल के अति उपयोग को कम करना

आवश्यकता से अधिक जल का इस्तेमाल बहुमूल्य और अपर्याप्त संसाधन की ऐसी बर्बादी है जिसे क्षमा नहीं किया जा सकता। हमारे देश में नलों से पानी रिसने के कारण और नलकर्म (plumbing) की ख़राबी की वजह से बहुत से जल की बर्बादी होती है। इसी प्रकार अत्यधिक सिंचाई की भी रोक-थाम करने की आवश्यकता है।

अतः आपने देखा कि कुछ ऐसे तरीके हैं जिनके अपनाने से हम अपने सीमित संसाधनों का सदुपयोग कर सकते हैं। अगले भाग को पढ़ने से पहले शायद आप यह जानना चाहेंगे कि आपने क्या सीखा है।

बोध प्रश्न 3

निम्नलिखित प्रश्नों का बहुत ही संक्षेप में उत्तर दें :

i) भूमि किस प्रकार का संसाधन है?

.....

.....

ii) उद्योगों के विकास, बांधों के निर्माण और जलाशयों के लिए स्थान का चुनाव करते समय अत्यंत सावधानी क्यों बरतनी चाहिए ?

.....

.....

iii) पहाड़ी क्षेत्रों में वनों का होना क्यों आवश्यक है?

.....

.....

iv) भूमि पर जल का प्रवाह क्या करता है?

.....

.....

v) मटर जैसे पौधे मृदा की सहायता किस प्रकार करते हैं?

.....

.....

vi) कृषक के लिए सामाजिक वानिकी क्यों महत्वपूर्ण है?

.....

.....

vii) भूमिगत जल का पुनर्भरण किस प्रकार होता है?

.....

.....

18.5 खनिज संसाधनों का संरक्षण

पिछली इकाई में आपने पढ़ा कि हमारा खनिज भंडार सीमित मात्रा में है और वह समाप्त हो सकता है। यदि इनकी खपत वर्तमान दर से ही होती रही तो बहुत से खनिज अधिक समय तक नहीं चल पाएंगे। संरक्षण का मतलब है कम से कम बर्बादी के साथ संसाधन का उचित उपयोग। संसाधनों की बर्बादी कम से कम करने या बचाने का एक तरीका यह है कि अपशिष्ट के रूप में कुछ भी न छोड़ा जाए और जो कुछ बच जाता है उसका अधिक से अधिक उपयोग किया जाए। निम्न स्तर के अयस्कों की गुणवत्ता ऐसी प्रकियाओं द्वारा सुधारी जाती है जिनमें मिट्टी, पत्थर के टुकड़े आदि बेकार के पदार्थ अलग किये जाते हैं और एक अच्छे किस्म का अयस्क प्राप्त किया जाता है।

जैसा कि पिछले भाग में आपने पढ़ा कि इस्तेमाल की हुई धातुओं के खुरचन का पुनःचक्रण किया जा सकता है या इसे फिर से इस्तेमाल में लाया जा सकता है। इससे बहुत से खनिज भंडारों पर आवश्यकता से अधिक दबाव कम हो जाएगा। इस्पात के स्थान पर मैग्नीशियम की मिश्र धातुओं का प्रयोग तेज़ी से बढ़ता जा रहा है और इसके फलस्वरूप तांबा, सीसा और टिन,की जिनका अभाव है, मांग घटती जा रही है। पारा, चाँदी, सोना, प्लेटिनम और एस्बेस्टस आदि जैसी धातुओं के लिए विकल्प ढूंढने की आवश्यकता है।

जहां से खनिज अयस्क निकाले गए हैं उन क्षेत्रों के प्राकृतिक पर्यावरण को खराब होने से बचाने की भी आवश्यकता है। जिन भागों में खुदाई की जाती है उनमें पोषक-तत्त्व समाप्त हो जाते हैं।

अत: वे भाग बंजर हो जाते हैं और उन पर कोई भी वनस्पति उग नहीं पाती। ऐसी क्षतिग्रस्त भूमि को अच्छे किस्म की उपरिमृदा (top soil) से भरा जा सकता है (चित्र 18.5)। इस प्रकार की भूमि को जिसकी उर्वरकता समाप्त हो जाती है फिर से उपजाऊ बनाने के लिए उर्वरकों, मल-जल, घरेलू या नगरीय अपशिष्टों और घरेलू खादों का प्रयोग किया जा सकता है।

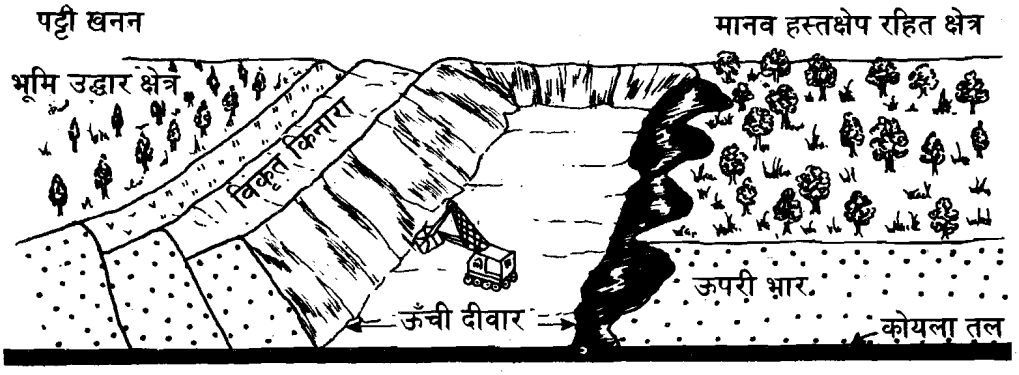

चित्र 18.5 : उपरिमृदा को खुरचने के बाद खुदाई किए गए भाग को मृदा से ढक दिया जाता है और वनरोपण किया जाता है।

संसाधनों के उपयोग की मॉनीटरिंग या देखभाल

विभिन्न संसाधनों की गुणवत्ता और मात्रा में परिवर्तनों का लेखा-जोखा रखना, संसाधन संयोजन में उतना ही महत्वपूर्ण है जितना मूल भंडारों का मूल्यांकन।

सुदूर संवेदी विधि, संसाधनों के उपयोग के देखभाल करने का सबसे अच्छा तरीका है। इसके लिए वनों, भूमि, खनिज भंडारों जलाशयों और हिम भंडारों में कितनी और किस प्रकार की कमी हो रही है, इसका अध्ययन करना होता है। उदाहरण के लिए नदियों के पानी को मॉनीटर करने से बाढ़ और अपरदन से होने वाली क्षति से बचा जा सकता है या इसको कम किया जा सकता है। मॉनीटर करने से यह पता चलता है कि शुष्क या अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में अधिक सिंचाई के कारण मृदा में लवणता या क्षारता उत्पन्न हो जाती है। अधिक सिंचाई से हुए हानिकारक प्रभाव को दक्षिणी हरियाणा और राजस्थान में देखा गया है।

बोध प्रश्न 4

नीचे कुछ कथन दिए गये हैं। सत्य कथन के लिए (स) और असत्य कथन के लिए (अ) लिखिए।

i) संरक्षण का अर्थ है कि संसाधन का बिल्कुल भी उपयोग न किया जाए।
ii) पृथ्वी के जिन हिस्सों से खनिज खोद कर निकाले जाते हैं उनमें पोषक तत्वों की मात्रा बहुत अधिक होती है और इसीलिए वे बहुत उपजाऊ होते हैं।
iii) मल-जल, घरेलू या नगरीय अपशिष्ट, घर में बनाई गई खाद इत्यादि के प्रयोग से निम्नकोटि की भूमि में उर्वरकता कम हो जाती है।
iv) 'सुदूर संवेदी' विधि, संसाधनों के उपयोग की मॉनीटरिंग या देखभाल का सबसे अच्छा तरीका है।
v) मॉनीटर करने से पता चलता है कि शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों की अधिक सिंचाई के कारण मृदा की उर्वरकता और उत्पादकता में वृद्धि होती है।

18.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि किस प्रकार मृदा, जल, वन और खनिज जैसे सीमित और गैर-नवीकरणीय संसाधनों का सबसे अच्छी तरह से उपयोग किया जा सकता है, और यदि हम अपने सीमित संसाधनों का बुद्धिपूर्वक और सोच- विचार कर बनाई गई योजनाओं के साथ इस्तेमाल करें तो वे लम्बे समय तक चल सकते हैं और आने वाली पीढ़ियों के लिए उनको बचाया जा सकता है। इसके कुछ उदाहरण हैं जैसे कि :

- भूमि प्रबंध के व्यापक कार्यक्रम और संयोजन के कारण मृदा अपरदन या मृदा शिथिलता की गति को कम करके या उसकी रोक-थाम करके, हम अपने भूमि संसाधन का संरक्षण कर सकते हैं।

- वन संपदा की कटाई की वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर, वनों की कटाई को मॉनीटर करके, वनों में आग लगने पर नियंत्रण करके और उसकी रोकथाम के लिए कोई निश्चित पद्धति अपनाकर एवं वनों के संरक्षण के लिए कड़े कानून बना कर हम अपने वन संसाधनों का संरक्षण कर सकते हैं।
- भूमिगत जलाशयों के पुनर्भरण द्वारा, प्रचुरता के क्षेत्रों से अभावग्रस्त क्षेत्रों की ओर अधिक जल को ले जा कर, इस्तेमाल किये हुए जल का पुनःचक्रण करके और समुद्री जल का विलवणीकरण करके हम अपने लोगों को अच्छे किस्म का जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध करा सकते हैं।
- अपशिष्टों के पुनःचक्रण से संसाधनों के उपयोग में सुधार किया जा सकता है और साथ ही प्रदूषण को भी कम किया जा सकता है।

18.7 अंत में कुछ प्रश्न

निम्नलिखित के उत्तर संक्षेप में दें :

1 सिंचाई के लिए मल-जल का किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है?

.....

.....

2 किसी धातु का पुनः चक्रण क्या है? इस प्रयोजन से क्या लाभ है?

.....

.....

3 मृदा की शिथिलता किस प्रकार रोकी जा सकती है?

.....

.....

4 खनिज संसाधनों का संरक्षण क्यों आवश्यक है?

.....

.....

18.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1 i) वन आवरण ii) खनिज iii) जल iv) भूमि

2 i) पुनः चक्रण ii) जीवाणु iii) सिंचाई
iv) पुनः चक्रण v) सीमेंटिग पदार्थ vi) कच्ची सामग्री

3 i) भूमि एक समाप्त होने वाला ग़ैर-नवीकरणीय संसाधन है।
ii) ग़ैर कृषि कार्यों के लिए वन भूमि और उपजाऊ कृषि भूमि का उपयोग किए जाने के कारण उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों का पर्यावरण और सामाजिक-आर्थिक स्थिति अंस्त-व्यस्त हो जाती है।
iii) वन ईंधन, चारे, इमारती लकड़ी और जंतुओं के लिए स्थान उपलब्ध कराने के लिए संसाधन का काम करते हैं। वन मृदा अपरदन को रोकने एवं भूमिगत जल की मात्रा बढ़ाने में भी सहायक होते हैं।
iv) जल प्रवाह के कारण तंग नालियाँ बन जाती हैं और बाद में ये गहरी तंग घाटियों में परिवर्तित हो जाती हैं और अंततः भूमि में खड्ड बन जाते हैं।
v) मटर जैसे पौधे मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा में वृद्धि करते हैं और उत्पादकता के साथ-साथ मिट्टी को बांधे रखने की क्षमता में भी वृद्धि करते हैं।
vi) गांव की सीमाओं के भीतर तेज़ी से बढ़ने वाले पेड़, कृषक की ईंधन, चारे, फलों, लकड़ी और अन्य आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं।
vii) वनस्पति और वृक्ष लगाने से भूमिगत जलाशयों का पुनर्भरण हो सकता है।

4 i) अ ii) अ iii) अ iv) स v) अ

अन्त में कुछ प्रश्न

1 मल-जल में कार्बनिक पोषक पदार्थ होते हैं। इस जल को जीवाणुओं एवं ज़हरीले तत्वों से मुक्त करके सिंचाई के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।
2 जिस विधि से अपशिष्ट संसाधनों को दोबारा इस्तेमाल करने योग्य बनाया जाता है, उसे पुनः चक्रण कहते हैं। खुरचन एवं पुरानी इस्तेमाल की हुई धातुओं को पिघलाकर एवं पुनःचक्रण करके कई प्रकार से इस्तेमाल किया जा सकता है।
3 मटर एवं सेम के आवर्तन से मृदा की शिथिलता को रोका जा सकता है, क्योंकि इससे मृदा के पोषक तत्त्वों की कमी दूर हो जाती है। मृदा की लवणता और क्षारता को नहरों, जलाशयों और तलाबों से जलस्राव को बंद करके तथा केवल आवश्यकतानुसार जल का इस्तेमाल करके नियंत्रित किया जा सकता है।
4 खनिजों का आरक्षित भण्डार बहुत सीमित मात्रा में उपलब्ध है। यदि इसका इस्तेमाल असावधानी से किया जाये तो ये शीघ्र ही समाप्त हो जायेंगे। इसी वजह से खनिज संसाधनों का संरक्षण आवश्यक है। संरक्षण का अर्थ है कि संसाधनों का उचित ढंग से इस्तेमाल किया जाए ताकि कम से कम बर्बादी हो।

शब्दावली

अम्ल वर्षा : वर्षा या हिमपात जिसका pH मान 5.6 से कम हो।

अर्धशुष्क : ऐसी भूमि जिस पर शुष्क क्षेत्रों की अपेक्षा थोड़ी अधिक वर्षा होती है।

अयस्क : ऐसी चट्टानें या खनिज पदार्थ जिनसे धातुओं को निकाला जाता है।

अदीर्घस्थायी प्रदूषक : प्रदूषक जो पर्यावरण में उसी प्रकार लम्बे समय तक बिना परिवर्तित हुए नहीं रह सकते हैं। अर्थात् वे जो सरल रूपों में विखंडित हो जाते हैं।

अस्वैच्छिक पेशी : पेशी जो इच्छा के नियंत्रण में नहीं है, जैसे हृदय से संबंधित पेशियां।

अकशेरूकी : बिना रीढ़ की हड्डी वाले जंतु।

अगवजन : सतह का दोहन और पृथ्वी की पपड़ी से पत्थरों या खनिज निक्षेपों का हटाना।

आवास : ज़मीन, जल या पेड़-पौधे जो किसी भी जीवधारी का प्राकृतिक घर है।

आवर्तन : मिट्टी की उर्वरकता को बनाए रखने के लिए भूमि के उसी हिस्से में प्रत्येक वर्ष अलग-अलग किस्म की फसलें उगाना।

आर्द्रता : वातावरण में उपस्थित जल वाष्प।

उर्वरक : सामग्री अथवा पदार्थ जो पौधों के पोषण के लिए आवश्यक रासायनिक तत्त्व मृदा को प्रदान करते हैं।

उपभोक्ता : जीव, जो कार्बनिक पदार्थों के रूप में उर्जा ग्रहण करते हैं।

उत्पादक : वे जीव जो सूर्य के प्रकाश की मदद से अकार्बनिक पदार्थों से नये कार्बनिक पदार्थों का निर्माण करते हैं।

उत्प्रवाह : गहराई से आने वाला पानी जो पोषक तत्त्वों से भरपूर रहता है।

ऊतक : कोशिकाओं का एक समूह जो जीवों में एक विशेष कार्य करता है, उदाहरण के लिए पेशियां।

एरोसॉल : गैस में छोटे, द्रव या ठोस, कणों (0.1-100 माइक्रोन व्यास) का निलंबन। उदाहरण के लिए धुँआ (वायु में ठोस कण) कीटाणुनाशकों, वायु निर्मलकों, पेंट और सौंदर्य प्रसाधनों में एरोसॉल स्प्रे का व्यापक प्रयोग किया जाता है।

एरोसॉल नोदक : वे संपीड़ित गैसें या वाष्प, जो दाब हटाने पर प्रसारित होती हैं और उस पात्र में—उपस्थित अन्य पदार्थ को साथ ले जाती हैं। इनका प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, घरेलू सफाई यंत्रों इत्यादि में किया जाता है। ब्यूटेन, प्रोपेन, नाइट्रोजन, कार्बनडाइऑक्साइड, क्लारोफ्लुरोकार्बन सामान्य एरोसॉल नोदक हैं।

एश्चुअरी : वह स्थान जहाँ स्थलीय जल और समुद्री जल आपस में मिलते और मिश्रित होते हैं।

कृषि रसायन : कृषि में प्रयोग होने वाले रसायन।

कीटनाशी : एक रासायनिक यौगिक या पदार्थ जो कीटों का नाश करता है।

कार्बनिक पदार्थ : वे पदार्थ जिनमें कार्बन, हाइड्रोजन और कभी-2 आक्सीजन नाइट्रोजन तथा अन्य तत्त्व भी पाए जाते हैं।

कोशिका : जीवन की संरचनात्मक इकाई।

कच्छ वनस्पति : उष्णकटिबंधीय वृक्षों की एक प्रकार जो कच्छ स्थानों में उगते है और जिनकी जड़ें बहुत तथा उलझी हुई और जमीन से ऊपर होती हैं।

कृतंक : स्तनपायी (स्तनपायी भी देखिए) जैसे कि चूहे, मूषक और उनके सम्बन्धी।

कंकाल : दृढ़ या लचीला, आंतरिक या बाह्य, ढांचा, जो शरीर के मृदु ऊतकों को सहारा और रक्षा देता है और पेशियों के जुड़ने के लिए आधार प्रदान करता है।

कशेरूकी : रीढ़ वाले जंतु जैसे कि मछली, मनुष्य।

खाद्य शृंखला : जीवों का एक क्रम जो एक दूसरे को खाते है। इस प्रकार उत्पादक से उपभोक्ताओं की एक शृंखला तक पोषण और उर्जा प्रवाह होता है।

गामा किरण : रेडियोधर्मी पदार्थों से निकलने वाली बहुत छोटी तरंग-दैर्ध्य की विद्युत्-चुम्बकीय किरणें।

गिल्स : जल में रहने वाले जानवरों के श्वसन अंग।

ग्रीन हाउस : काँच से घिरा हुआ, जलवायु नियंत्रित कक्ष जिसमें छोटे, या बेमौसमी पौधे उगाए जाते हैं और जिनमें उनकी सुरक्षा भी रहती है।

गुरुत्वाकर्षण बल : वह बल जो वस्तुओं को पृथ्वी केंद्र की ओर आकर्षित करता है।

गाद : मृदा (मिट्टी) में चट्टान का एक खंड या एक खनिज कण जिसका व्यास 0.02-0.05 मिलीमीटर अर्थात् सूक्ष्म बालू से छोटा होता है।

छाल : तने का बाहरी भाग। इसमें कॉर्क (ज़्यादातर एक मृत ऊतक और तने का कुछ जीवित ऊतक) होता है।

छद्मावरण : शत्रु को धोखा देने या बहकाने के लिए काम में लाई जाने वाली युक्ति।

जलाक्रांत : जल से पूर्णतः भीगी हुई भूमि।

जलभर : चट्टानों में एक प्रकार का जल भण्डारण जिससे कुएँ एवं स्रोतों को जल की आपूर्ति होती है।

ज्वारभाटा : चन्द्रमा के आकर्षण से समुद्र के जल स्तर में उतार-चढ़ाव आने को ज्वार-भाटा कहते हैं।

जठरीय स्राव : ये पाचक तरल हैं जो आमाशय की भित्तियों द्वारा स्रावित होते हैं।

जठरांत्र : पाचक तंत्र से संबंधित जिसमें आमाशय, आते, और सभी सहायक अंग आते हैं।

जीवनाशक : ये रासायनिक पदार्थ हैं जो पर्यावरण में अवांछित समझे जाने वाले जीवों को मारने के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

जलस्थल जीवी : असमतापी (कशेरूकी) (मेंढक, सैलामेन्डर आदि) जिनके लार्वा जल में रहते हैं और गिल्स से सांस लेते हैं, इनके प्रौढ़-स्थलीय होते हैं, तथा फेफड़ों और नम, ग्रथिल त्वचा से सांस लेते हैं।

जीव-संदीप्ति : जीवित प्राणियों द्वारा प्रकाश का उत्पादन।

जीवभार : किसी विशेष क्षेत्र में सभी अथवा कुछ चुने हुए जीव समूहों का कुल भार।

जाति या स्पीशीज : सम्बन्धित जीव जो समान पूर्वज परम्परा के माध्यम से एक दूसरे के सदृश होते हैं और जिसके सदस्य एक दूसरे से प्रजनन कर सकते हैं, लेकिन किसी अन्य समूह के वर्ग से प्रजनन करने में असमर्थ हैं।

पी एच (pH) : विलयनों की अम्लता या क्षारता को प्रदर्शित करने वाली एक अभिव्यक्ति। यदि किसी विलयन का पी एच मान 0 और 7 के बीच है, तो यह अम्लीय है, और यदि यह 7 से 14 के बीच है तब यह क्षारीय है। 7 के पी एच पर इसे उदासीन या न्यूट्रल कहा जाता है।

दीर्घस्थायी प्रदूषक : प्रदूषक जो दीर्घकाल तक पर्यावरण में अपरिवर्तित रहते हैं।

द्वितीय प्रदूषक : प्राथमिक प्रदूषकों के संयोजन से बने प्रदूषक।

धातुमल (स्लैग) : अयस्क से धातु निकालने के बाद बचने वाला अयस्क पदार्थ।

निस्यंदक : अवांछित पदार्थों को पृथक करने के लिए प्रयुक्त युक्ति।

निक्षालन : वर्षा इत्यादि द्वारा पौधों के लिए आवश्यक तत्त्वों का बढ़ जाना।

नाइट्रोजन स्थिरीकरण : नाइट्रोजन को नाइट्रेट के रूप में स्थिरीकरण जिसका पौधे उपयोग कर सकें।

परमाणु रियेक्टर : एक रियेक्टर जिसमें नियंत्रित नाभिकीय अभिक्रिया द्वारा ऊर्जा उत्पन्न की जाती है।

प्रकाश-वोल्टीय यंत्र : एक यंत्र जिसका इस्तेमाल सौर्य विकिरण से विद्युत संकेत को उत्पन्न करना है।

प्राथमिक प्रदूषक : कार्बन मोनोक्साइड, सल्फर और नाइट्रोजन के ऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन और सूक्ष्म कण जैसे प्रदूषक।

प्रशीतक द्रव : पदार्थ जो प्रावस्था में परिवर्तन, अर्थात् द्रव से गैस या गैस से द्रव, के कारण प्रशीलन प्रभाव उत्पन्न करता है।

प्रशीतक गैस : फ्लुरोकार्बन, फ्रिऑन इत्यादि गैसें।

पारिस्थितिकी विज्ञान : जीव विज्ञान की वह शाखा जो सजीव और उस के पर्यावरण के बीच सम्बन्धों का अध्ययन करती है।

पारिस्थितिक तंत्र : पारस्परिक क्रियाओं का संग्रह और उनको प्रभावित करने वाले अजैविक कारकों की पारस्परिक क्रियाओं का संग्रह।

पर्यावरण : किसी सजीव को उसके जीवन काल में प्रभावित करने वाली कोई भी वस्तु।

प्रोटिस्टा : एक कोशिकीय जन्तु और पौधे।

पोषण स्तर : खाद्य श्रृंखला का वह स्तर जिस पर कोई सजीव सक्रिय होता है जैसे द्वितीय पोषण स्तर के सदस्य शाकाहारी जन्तु, प्रथम पोषण स्तर के सदस्य पौधों को खाते है।

प्रवाल : कुछ एन्थोज़ोआ या कुछ हाइड्रोज़ोआ द्वारा बनाया गया भारी कैल्सियमी कंकाल जो मुख्यता कैल्सियम कार्बोनेट का बना होता है।

पर्णपाती : पौधे जिनकी पत्तियां वर्ष के एक मौसम में गिर जाती है, सदाबहार नहीं रहती।

पादपप्लवक : पानी (समुद्री या अलवणजल) की ऊपरी परतों में तैरने वाले सूक्ष्म जीव।

प्लवक : महासागरों के सुप्रकाशी अंचलों में पाए जाने वाले सूक्ष्मदर्शीय जीव जिनकी गति मुख्य रूप से पानी की गति से निर्धारित होती है। वे पानी में चारों और बहते रहते हैं क्योंकि वे पानी की धाराओं के विरुद्ध नहीं तैर सकते।

पराग कण : धूल जैसे दिखाई देते हैं। परागकण पादप की नर जनन यूनिट है जो एक सख्त, प्रतिरोधी खोल में बंद रहता है। यह अंडे को निषेचित करता है और दोनों से मिलकर बीज बनता है।

पराबैंगनी प्रकाश : विद्युत-चुम्बकीय विकिरण जिसकी तरंग दैर्ध्य दृष्य प्रकाश से छोटी और एक्स-किरण से बड़ी होती है, वे तरंगदैर्ध्य भी सम्मिलित हैं जो सामान्यतया मनुष्यों को तो नहीं दिखाई देती किन्तु मधुमक्खियों और गंजन पक्षी आदि को दिखाई देती है। यह त्वचा के ऊतक और आनुवंशिक पदार्थ के लिए विनाशकारी है।

प्राणिप्लवक : जलराशि (समुद्री या अलवण जल) की सतह की परतों के नजदीक अपवाही सूक्ष्म जंतु।

फ्लाई एश : फैक्टरी से निकलने वाले धुएं में उपस्थित कण।

घनत्व : प्रति यूनिट आयतन में किसी पदार्थ का द्रव्यमान।

फर्न : टेरिडोफाइटा का सदस्य, जिसकी पत्तियां तने के अनुपात में बड़ी होती हैं और जिनकी निचली सतह के किनारों पर बीजाणुधानी होते हैं। बीजाणुधानियाँ बीजाणु धारण करने वाली संरचनाएं हैं। ये ज्यादातर ऊँचाई पर होते हैं।

बॉक्साइट : एक प्रकार की चिकनी मिट्टी की तरह का पदार्थ जिससे ऐलुमिनियम प्राप्त किया जाता है।

बीजाणु : जनन कोशिका जो एक नए जीव के रूप में पनपती है जैसे कि जीवाणु, कवक, परिस्थितियाँ वृद्धि के लिए प्रतिकूल होने पर जब एक कोशिका अपने आपको रक्षी आवरण में बंद कर लेती है तब जीवाणु बीजाणु बनते हैं। यह एक प्रतिरोधी संरचना है, जिसमें प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों को सहने की क्षमता होती है।

भूतापीय ऊर्जा : पृथ्वी की आन्तरिक ऊष्मा जो ऊर्जा का एक शक्तिशाली स्रोत है।

भारी धातुएँ : धातु जिसका आपेक्षित घनत्व लगभग 5.0 या इससे अधिक है।

मांसाहारी : वे जन्तु जो अन्य जन्तुओं को खाते हैं।

महाद्वीपीय शेल्फ : महाद्वीप का वह भाग जो अपेक्षाकृत उथले जल में निमग्न रहता है।

मॉस : ब्रायोफाइटा में आने वाले पौधे जो महासागरों को छोड़कर लगभग सभी नम आवासों में मिलते हैं।

रेडियोधर्मी : रेडियम, यूरेनियम इत्यादि जैसे पदार्थ जिनके परमाणु विखंडित हो जाते हैं, और इस विखंडन में वैद्युत आवेशित कणों के रूप में किरणों का उत्सर्जन होता है, जिसमें अपारदर्शक ठोसों को पार करने की क्षमता होती है।

रेजिन : चिपचिपा पदार्थ जो पाइन, फर इत्यादि पौधों के काटे जाने या चोट किए जाने पर बाहर बहने लगता है।

रंध्र : पत्ती, तने आदि की सतह पर एक छोटा छिद्र या द्वारक होता है। यह पत्ती या तने के भीतरी भाग से गैसों और वाष्पों का वायुमंडल में विसरण होने देता है।

लैगून : तट के साथ-साथ फैला लवण (नमकीन) जल, छोटे द्वीपों द्वारा समुद्र से अलग होता है।

विलवणीकरण : समुद्री जल से लवणों को दूर करने की प्रक्रिया को विलवणीकरण कहते हैं।

वायो स्फीयर : पृथ्वी की भूमि, मिट्टी, जल और वातावरण सहित वह सम्पूर्ण भाग जिसमें जीव पाये जाते हैं।

वाग : नमीयुक्त पारिस्थितिकी तंत्र जिसमें अम्लीय अवस्था में तमाम पीट और मॉस पाए जाते हैं।

वियोजक : सजीव, जो मृत कार्बनिक पदार्थों का ऊर्जा के स्रोत के रूप में उपयोग करते हैं।

वायुमंडलीय दाब : किसी सम्बन्धित स्थल से ऊपर वायुमंडलीय गैसों के केवल भार ही के कारण वायुमंडल में उस स्थल पर दाब।

वितान : काष्ठीय पौधों की शाखाओं, टहनियों और पत्तियों द्वारा कुछ दूरी पर बनाया गया आवरण।

वनस्पति : किसी क्षेत्र के पादपों का कुल द्रव्यमान।

वर्षण : वातावरण से गिर कर जमीन तक पहुंचने वाले जल का कोई एक या सभी प्रकार, जिसमें तरल (वर्षा) या ठोस (बर्फ) शामिल है।

सामाजिक वानिकी : ग्रामीण लोगों के लिए ईंधन, चारा, इमारती लकड़ी एवं छोटे वन्य उत्पादन की पूर्ति के लिये वृक्षारोपण कार्यक्रम।

संवेदक : ग्राही, जो आवाज़, प्रकाश, दाब एवं उष्मा जैसे विशेष उद्दीपनों के प्रति संवेदनशील होते हैं।

संक्षारक : पदार्थ जिनका संक्षारण होता है। संक्षारण से तात्पर्य है, रासायनिक अभिक्रिया द्वारा धीरे-धीरे नाश होना।

स्क्रबर : सिक्त संग्राहक भी कहा जाता है। यह तैयार गैस से अवांछित तत्त्वों को हटाने के लिए प्रयोग की जाने वाली एक युक्ति है।

स्वैच्छिक पेशी : पेशी जो सीधे ही जीव की इच्छा के नियंत्रण में रहती है, उदाहरण के लिए मनुष्य में हाथ की पेशी।

सर्वभक्षी : वे जंतु जो कभी तो मांसाहारी होते हैं और कभी शाकाहारी।

सूक्ष्मदर्शीय : वस्तुएँ जिन्हें मात्र आँखों की सहायता से नहीं देखा जा सकता और सूक्ष्मदर्शी के नीचे साफ देखा जा सकता है। सूक्ष्मदर्शी एक ऐसा यंत्र है जो छोटी वस्तुओं का बड़ा प्रतिबिम्ब बनाता है।

सरीसृप : असमतापी कशेरूकी जिनकी त्वचा शुष्क और शल्की होती है और जो ज़मीन पर अंडे देते हैं। उदाहरण के लिए साँप, छिपकलियाँ, कूर्म आदि।

सिलिका : एक कठोर, सफेद या रंगहीन पदार्थ जो प्रकृति में बहुतायत से होता है।

स्पेक्ट्रम : रंगों जैसे कि इन्द्रधनुष में दिखाई पड़ने वाले लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, जामुनी और बैंगनी के बैंड के रूप में प्रतिबिंब जो कि प्रकाश की एक किरण द्वारा उस समय बनता है जब वह प्रिज़्म या उस जैसे किसी पदार्थ से गुजरती है।

स्तरण : यह भिन्न-भिन्न प्रकार और ऊँचाइयों के पौधों का प्राकृतिक विन्यास है और ये पौधे अलग-अलग परतें या स्तर बनाते हैं।

स्थलीय जीवधारी : ज़मीन पर रहने वाले जीवधारी।

शुष्क : भूमि का वह भाग जहाँ पर अधिक वर्षा नहीं होती।

शाकाहारी : वे जन्तु जो भोजन के लिए सिर्फ पौधों पर निर्भर रहते हैं।

शैवाल : सरल, प्रकाश-संश्लेषी जीवों का एक समूह। एक, अथवा बहु-कोशिकीय और अधिकतर जल में रहने वाले होते हैं।

शंकु: शंकुधारियों की एक जननोत्पादक संरचना जिसमें शल्क जैसी रूपांतरित पत्तियों और पराग या बीजों का गुच्छा होता है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

1 पर्यावरण तथा प्रदूषण डा. रघुवंशी, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1987

2 पारिस्थितिकी परिचय, श्री देवेन्द्र प्रताप नारायण सिंह, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1976

3 पर्यावरणीय प्रदूषण, श्री विष्णुदत्त शर्मा, हरियाणा साहित्य अकादमी, 1981

4 भारत का सामान्य भूगोल भाग-1, एन सी ई आर टी, 1978

5 भारत का भूगोल भाग-2, एन सी ई आर टी, 1978

6 मानव एवं आर्थिक भूगोल, एन सी ई आर टी, 1978

7 मनुष्य और वातावरण, एन सी ई आर टी, 1976